21

बनारस की स्वर्ण नक्काशी कला की निरन्तरता

कु. स्वाति सिंह

"आभूषण" की शाब्दिक व्युत्पत्ति है–"आ समन्तात् भूषणम् अलंकरणम्" जो शरीर की शोभा को समग्र रूप से बढ़ाये, उसे आभूषण कहते हैं।"[1] आभूषण के प्रति मनुष्य का, विशेषतः स्त्री का, आकर्षण आदिकाल से रहा है। आभूषण मानव की स्वाभाविक शृंगार प्रवृत्ति की अभिव्यक्ति के माध्यम है। यही कारण है कि विश्व के सभी देशों, जातियों और सभ्यताओं में आभूषणों को धारण करने की परम्परा सभी वर्गों के लोगों में प्रचलित रही है। भारतीय स्त्री–पुरुष दोनों ही प्राचीन काल से आभूषण प्रेमी रहे हैं। प्रागैतिहासिक काल के गुफा चित्रों में भी कई स्थानों पर आभूषणों का अंकन मिला है। साहित्यिक साक्ष्यों से भी आभूषणों एवं उपादानों पर प्रकाश पड़ता है :

'वराइवे द्रैवतासो हिरण्यैरभि स्वधाभिस्तन्वः पिपिश्रे।[2]

साहित्यिक साक्ष्यों द्वारा बनारस के आभूषणों पर भी यथेष्ट प्रकाश पड़ता है।

श्यामलिक कृत 5वीं शती के प्रसिद्ध भाण *पादताडितकम* में काशी की एक वेश्या का उज्जैन के मकरवीथि में बसने का उल्लेख है जिसने कनपटी पर लटकते हुए जड़ाऊ कुण्डल धारण कर रखे थे।[3] काशी की वेश्या द्वारा धारण किया हुआ जड़ाऊ कुण्डल काशी क्षेत्र में ही तैयार किया गया होगा। 12वीं शती के ग्रन्थ *उक्तिव्यक्तिप्रकरण* में वर्णन है कि बनारस के सुनार चूड़ियाँ बनाने में प्रसिद्ध थे।

"उनाड चूड़ा सोनार"[4]

उक्तिव्यक्ति प्रकरण 38/24

बनारस के आभूषण कला के निर्माण की मुख्य तकनीकों में एक नक्काशी (Repousse) या पानी सोने के पतले पत्तरों पर अभिप्रायों को पीछे से ठोककर उभारने की कला है। इसमें मुख्य रूप से फूल, पत्तियों, पशु–पक्षी, देव व मानव आकृतियों को उभार कर बनाया जाता है। साथ ही शिकारगाह तथा ऐसे ही अन्य दृश्यों का भी अंकन किया जाता है। इस कला के द्वारा तैयार उपादानों में आभूषण के अतिरिक्त मन्दिर के देवता के उपयोग की वस्तुएँ जैसे–बर्तन, चंवर, झूला आदि भी तैयार किये जाते हैं। दैनिक उपयोग की वस्तुओं में सुराही, प्याला, आभूषण–मंजूषा, पानदान, इत्रदान, सूरमेंदानी आदि पर नक्काशी का कार्य होता है। मन्दिर और समृद्ध घरों के दरवाजों, कलश, चौकी पर भी नक्काशी की जाती है।

नक्काशी कला के प्राचीनतम उदाहरण में किन्नर–किन्नरी की आकृतियां है, जो भारत कला भवन, वाराणसी में संगृहीत है। इसका समय लगभग प्रथम शती ईसा पूर्व (शुंगकाल) है। इसे पतले स्वर्ण पत्तर पर पीछे से ठोंककर तैयार किया गया है, जो भारतीय कला का अद्वितीय उदाहरण है।[5] रिपोसे तकनीक से निर्मित आभूषणों के प्राचीनतम

अन्य उदाहरण भी उपलब्ध हैं।[6] जिनसे स्पष्ट है कि प्राचीन काल से ही भारत में नक्काशी कला के द्वारा मूर्ति व आभूषण दोनों ही तैयार किये जाते थे। 19वीं-20वीं शती तक यह परम्परा निरन्तर कायम रही जिनके उदाहरण दिल्ली, कश्मीर, पंजाब, बनारस, आगरा, लखनऊ, जयपुर, बीदर, कच्छ, केरला, बंगाल, आसाम और तमिलनाडु से प्राप्त होते हैं।[7]

प्रस्तुत लेख प्रसिद्ध कलाविद् राय आनन्दकृष्ण जी, बनारस के प्रमुख आभूषण व्यवसायी हीरालाल जी अग्रवाल एवं नक्काशी कला के कुशल कारीगर सुभाष विश्वकर्मा के व्यक्तिगत साक्षात्कार से प्राप्त तथ्यों पर आधारित है। बीसवीं शती के प्रारम्भ में कन्हैयालाल वर्मा बनारस की गुलाबी मीनाकारी के साथ ही नक्काशी कला के भी अद्‌भुत शिल्पी थे। उनके द्वारा निर्मित कमरबन्द के तिकड़े पर गुलदाउदी के फूल की नक्काशी पीछे से उभारकर की गई थी। इसके लिये वह बनारस स्थित कम्पनी बाग जाते थे और वहाँ के माली से गुलदाऊदी फूल मांगकर लाते और फिर उसे देख कर फूल को चाँदी के पत्तर पर उभारते थे। गुलदाऊदी के फूल की स्वाभाविकता को दर्शाने के लिये फूल में निहित नसों को भी उभार कर दिखलाया गया है, जिससे फूल की स्वाभाविकता और कोमलता बखूबी दिखायी देती है। इसके अतिरिक्त उन्होंने एक चाँदी के फौव्वारे पर कार्य करना प्रारम्भ किया पर आर्थिक तंगी के कारण उसे अधूरा ही रहने दिया। फौव्वारे की गढ़त की बनावट गुलदाऊदी के फूल की पत्तियों के अनुरूप थी, जो बाद में भारत कला भवन संग्रह में आ गई।[8]

20वीं शती के प्रारम्भ में बनारस में नक्काशी कला के कारीगर विश्वेश्वरगंज, चौखम्बा, ब्रह्माघाट, गायघाट, सोनारपुरा में रहते थे। कुछ स्थानों पर इनके वंशज आज भी रहते हैं। इन कारीगरों में शिवपूजन वर्मा, गौरी सेठ, भूख्खन सेठ, माधव, राधे, छन्नू, जयपाल, बैजनाथ, घनश्याम आदि मुख्य थे। वर्तमान में कार्य करने वाले कारीगर सुभाष विश्वकर्मा जो सोनारपुरा में रहते हैं, इनके परिवार में नक्काशी का कार्य परम्परागत व्यवसाय है।[9]

नक्काशी कला की तकनीक पर सुभाष विश्वकर्मा से प्राप्त जानकारी के अनुसार–आभूषण पर नक्काशी करने वाले को 'नक्काशीवाला' कहा जाता है, परन्तु बर्तन पर नक्काशी करने वाले को 'कसेरा' कहते हैं। बनारस की नक्काशी कला को बनारसी भाषा में 'चिकोटी' और 'नाखूनी' नक्काशी कहा जाता है। 'चिकोटी' से तात्पर्य जो उभार नाखून की सहायता से पकड़ा जा सके। यहाँ की नक्काशी की विशेषता महीन होना है जो देखने में सुन्दर और सजीव प्रतीत होते हैं।

नक्काशी करने हेतु सबसे पहले पीढ़ा या पटरी (बनारसी भाषा) तैयार करते हैं, जो राल (रेजिन) और सुर्खी (ईंट का चूरा) में सरसों या अलसी के तेल का मिश्रण हैं। इसकी कोमलता और कठोरता सोने के पत्तर की कोमलता और कठोरता पर निर्भर करती है। अगर पत्तर कठोर है तो पीढ़ा कोमल होगा और पत्तर कोमल है तो पीढ़ा कठोर होगा ताकि जब हथौड़ी से ठोंका जाए तो आसानी से कार्य सम्पादित हो सके। इसके बाद द्वितीय चरण में सोने की पत्तर का निर्माण किया जाता है, जिसमें 92 प्रतिशत शुद्ध सोने में 8 प्रतिशत बट्टा मिलाया जाता है। उस 8 प्रतिशत में 50 प्रतिशत ताँबा और 50 प्रतिशत चाँदी मिलाकर पत्तर का निर्माण होता है। सोने की शुद्धता का पता सोने पर

लगे हॉलमार्क निशान से चलता है। हॉलमार्क पद्धति की शुरुआत ब्रिटिश काल से होती है। बाद के समय में यह पद्धति बन्द हो गयी थी परन्तु हाल के दो-चार बरसों से यह पद्धति फिर से शुरू हो गयी है। ब्रिटिश हॉलमार्क का स्टैण्डर्ड 22 कैरट सोने में 916 नं० हॉलमार्क होता है और 18 कैरट सोने में 750 नं० हॉलमार्क होता है। प्रतिशत नं० के रूप में लिखा रहता है। 19वीं शती में पत्तर का निर्माण 'निहाई' (लोहे के ब्लॉक) से होता था। इस पर सोने को रखकर हथौड़ी से पीट-पीट कर पत्तर बनाते थे। यह कार्य करने वाला 'निहाईवाला' कहलाता था। परन्तु वर्तमान समय में पत्तर को मशीन से बेलकर बनाया जाता है। मशीन से पत्तर बनाने का कार्य आजादी के बाद से शुरू होता है। प्रारम्भ में यह काम पंजाब में होना शुरू हुआ, जो बाद में लुधियाना, बटाला और गुजरात में भी होने लगा। पत्तर तैयार हो जाने के बाद सोने का पत्तर 'नक्काशीवाला' के पास नक्काशी के लिए जाता है।

नक्काशी में दो प्रकार से कार्य होता है-

(1) ठप्पा नक्काशी (चित्र-1)-ठप्पे का बनारसी नाम किलावा है। जिसमें ठप्पे पर पत्तर रखकर अभिप्राय उकेरा जाता है। मूल किलावा बनाने के लिए पहले मिट्टी का ठप्पा बनाया जाता है। फिर Lost Wax (मधूच्छिष्ट विधान) तकनीक से इस मिट्टी के ठप्पों में पीतल के साथ गनमेटल धातुओं (88% तांबा, 10% टीन और 2% जस्ता) को मिलाकर ठप्पे की ढलाई कर ली जाती है। किलावे की सहायता से एक जैसी आकृति बार-बार बनाई जा सकती है जैसे हार में प्रयुक्त कई तिकड़े एक ही किलावे से बनाये जाते हैं, जिससे एक समान अभिप्राय की आवृत्ति होती है।

(2) दूसरी विधि में सीधे पत्तर पर अभिप्राय को लोहे की नुकिली कलम से अंकित करके नक्काशी की जाती है। इस तरीके से कार्य करने में सबसे पहले कागज पर अभिप्राय अंकित करके उसकी कटिंग की जाती है फिर उसे स्वर्ण पत्तर पर उतार लिया जाता है। फिर नक्काशी के औजार जिसे 'कलम' कहते हैं, उसकी और हथौड़ी की सहायता से अभिप्राय को पहले पीछे से थलाई (उभार) करते हैं फिर बाद में ऊपर से कलम की सहायता से ठीक से संवारते हैं।

नक्काशी कार्य के लिये विभिन्न आकार की कलमें होती हैं और छोटी से बड़ी आकार की कई हथौड़ियां होती हैं। कोमल महीन दाने या बिन्दी बनाने के लिये 'बुल्ला' नामक कलम का प्रयोग होता है इससे टोपी नुमा आकार भी दिया जाता है। गोलाई करने के लिये 'गोलारी' कलम इस्तेमाल की जाती है। बनारसी नक्काशी वाले गोल आकार बनाने को "गोल कराड़ना" शब्द भी कहते हैं। सीधी रेखा और लहर देने के लिये भी अलग-अलग आकार में चौड़ाई, मोटाई लिये कलमें होती हैं। महत्वपूर्ण यह है कि कभी-कभी नक्काशी वाले को अभिप्राय की आवश्यकतानुसार नई कलमें भी बनवानी पड़ती हैं। ये सारी कलमें लुहार बनाता है। नक्काशी के कार्य के कुशल सम्पादन के लिये धैर्य और अनुभव आवश्यक होता है। कलम की सहायता से हथौड़ी द्वारा धीरे या तेज ठोंक देनी होती है, तभी उत्कृष्ट नक्काशी उभरती है। उभार हो जाने के बाद अभिप्राय में कहीं-कहीं जाली भी बनाई जाती है जिसे कलम की सहायता से ही काटा जाता है और बेकार हिस्से को काट कर निकाल दिंया जाता है।

नक्काशी पूरा होने के बाद सोने के पत्तर को (जिस पर नक्काशी उत्कीर्ण है) उसे एक कप पानी में 2 या

21.1: पीतल और गनमेटल से निर्मित किलावें (ठप्पा)

21.2: पादाभूषण, चाँदी, 20वीं शती ई. का प्रारम्भ

3 बूँद गन्धक (ऐसिड) मिलाकर बनाये गये घोल से पोंछकर साफ कर लिया जाता है। इससे उसका कालापन दूर हो जाता है। तदुपरान्त आभूषण "छिलाईवाले" के पास जाता है। "छिलाईवाला" आभूषण की नक्काशी के जरूरत के अनुसार "टचनी" से छीलकर आभूषण को पूर्णता प्रदान करता है।

नक्काशी के आभूषणों में सामान्यतया फूल पत्तियों की लतायें ही प्रमुख रही हैं जिनमें कमल, गुलाब, गुलदाऊदी, मौलसिरी, अंगूर के गुच्छे, पाँच पत्ती वाले फूल के अभिप्राय प्रमुख हैं। हीरा लाल जी अग्रवाल के अनुसार समय-समय पर अभिप्रायों के प्रकार बदलते रहे हैं, जैसे-मुगलों के समय पशु, पक्षियों के अभिप्राय के बजाय फूल पत्तियों के बेलबूटे बनाये जाते थे। बाद में ब्रिटिश काल में शिकार के दृश्य बनने लगे जिसमें बन्दूक से शिकार के दृश्य उभारे गये। इसके अतिरिक्त शेर द्वारा हिरन का शिकार, जंगल के दृश्य बनारस की नक्काशी कला में प्रमुख रूप से बना है। बनारस की नक्काशी कला में देव, मानव आकृतियों को भी बनाया गया है। रामायण के दृश्य कथात्मक शैली में बर्तन पर उकेरे गये हैं।

20वीं शती के बनारस की नक्काशी कला के उदाहरणों में अंगूर के गुच्छे के अभिप्राय वाला सोने का कण्ठा, सोने का हाथीमुख का कड़ा, सोने का पैर का कड़ा प्रमुख हैं। चाँदी के आभूषणों में पैर का कड़ा, अन्य उपादानों में आभूषण-मंजूषा पर भी नक्काशी का कार्य किया गया है।

20वीं शती के प्रारम्भ के कुछ प्रमुख नक्काशी के आभूषणों पर यहाँ संक्षिप्त चर्चा भी आवश्यक है। बनारस के एक सभ्रान्त परिवार के व्यक्तिगत संग्रह से प्राप्त 20वीं शती के प्रारम्भ का स्वर्ण निर्मित अंगूर के गुच्छे के अभिप्राय वाला उदाहरण किलावा पद्धति से बनाया गया है। इस कण्ठहार में निर्मित प्रत्येक अंगूर के गुच्छे को परिश्रम से उकेरा गया है। यह श्रम साध्य एवं धैर्य पूर्वक किया गया कार्य है। सोने के पतले पत्तर में पीछे से ठोंक देकर उभारकर बनाया गया अंगूर का प्रत्येक गुच्छा, उभार और गहराई को बख़ूबी दर्शाता है। साथ ही प्रत्येक गुच्छा पीछे की तरफ से कछुये की पीठ की तरह उभार लिये हुये है। इस तरह का कार्य वर्तमान समय में प्रायः बन्द हो गया है क्योंकि इस प्रकार का श्रम साध्य और धैर्य पूर्वक कार्य करने वाले कारीगर अब नहीं रह गये हैं। 20वीं शती के प्रारम्भ के ही एक दूसरे उदाहरण में करीब दो किलो चाँदी से बना पैर का कड़ा है (चित्र-2) जिसमें गुलदाऊदी के फूल को तराश कर बनाया गया है। यह अन्दर से पोला है। कड़े के मुख पर छोटे-छोटे घुघँरू सटा-सटाकर लगाये गये हैं। यह भी बनारस की नक्काशी कला का अद्भुत उदाहरण है। नक्काशी कला का एक अन्य उदाहरण चाँदी का पानदान है जिस पर आठ पत्तियों वाले फूल एवं डाल पर बैठे हुए पक्षी के जोड़े को बख़ूबी पीछे से उभारकर बनाया गया है (चित्र-3)। यह उल्लेख करना आवश्यक है कि मुझे 20वीं शती के प्रारम्भ के कुछ ऐसे खाके मिले हैं जिनमें तिथि भी दी गयी है (चित्र-4)। इन पर तैयार खाकों के आधार पर तत्कालीन राजा-महराजाओं के लिए पलंग, चौकी, कुर्सी आदि नित्य उपयोग की वस्तुओं के फ्रेम चाँदी पर नक्काशी तकनीक द्वारा तैयार किये जाते थे। ये उदाहरण नक्काशी कला के बहुमूल्य उदाहरण हैं जिन्हें सुरक्षित रखने की जरूरत है क्योंकि प्रायः इस तरह के बहुत से दुर्लभ आभूषण जानकारी के अभाव में बेच दिये जाते हैं या गला दिये जाते हैं।

21.3: पानदान, चाँदी, 20वीं शती ई. का प्रारम्भ

21.4: रेखाचित्र में कुर्सी का चाँदी का फ्रेम

संदर्भ एवं टिप्पणी

1. आचार्य भावना, *प्राचीन भारत में रूपशृंगार,* जयपुर, 1995, पृ. 99
2. ऋग्वेद, 5.60.4
3. मोतीचन्द्र, *काशी का इतिहास,* वाराणसी, तृतीय संस्करण, 2003, पृ. 325
4. ईश्वरशरण विश्वकर्मा, *काशी का ऐतिहासिक भूगोल,* दिल्ली, 1987, पृ. 163
5. जी. मोरले, 'ऑन अप्लाइड आर्ट्स ऑफ इण्डिया इन भारत कला भवन', *छवि,* वाल्यूम 1, वाराणसी, 1971, पृ. 107-129, चित्र सं. 7
6. यू.आर. बालाकृष्णन एवं एम.एस. कुमार, *डांस ऑफ द पिकॉक : ज्वेलरी ट्रेडिशन ऑफ इण्डिया,* मुम्बई, 2001, पृ. 69 चित्र सं. 81
7. एस.के. पाठक, *इण्डियन सिल्वर,* दिल्ली, 2008, पृ. 79
8. उपर्युक्त जानकारी राय आनन्द कृष्ण से व्यक्तिगत साक्षात्कार में प्राप्त हुई है।
9. उपर्युक्त जानकारी हीरा लाल अग्रवाल से व्यक्तिगत साक्षात्कार में प्राप्त हुई है।